Contents

कथन शैली 1

परिभाषा 2

जानने की विधि - Gresping – Prociedure 4

अवग्रह subject to know- 5

शंका समाधान – स्थान स्मारक शिविर दिनांक २-८-१९-से -११-८-१९ 14

ग्रेस्पिंग प्रोसीजर पर पीएचडी सम्भव है | ८० पेज की लिस्ट तैयार है तो विस्तार किया जा सकता है | अन्य मत से तुलना भी की जा सकती है |

कथन शैली

– सूक्ष्म-स्थूल, सामान्य-विशेष, मुख्य-गौण, उपचरित-अनुपचरित | स्वतंत्र कथन कठिन है, असम्भव है, श्रद्धा चारित्र गुण की पर्याय की प्रधानता से भी कहा जाता है जैसे; अनुभव एवं बंध की भाषा में बोलते हैं | चार अनुयोग अनुसार भी नाना प्रकार से कथन हो सकते हैं |

मतिज्ञान का परिणमन केवलज्ञान गम्य, स्वाधीन, निरपेक्ष है; इसका कथन सापेक्ष रीति से होता है इस मजबूरी का छल ग्रहण करने के स्थान अर्थात शब्द म्लेच्छ होने से बच कर वस्तु का अनुमान लगाना चाहिए | अनुमान से अनंतगुनी वस्तु होती है | अतः असंख्यात लोक प्रमाण विचार करना चाहिए |

परमार्थ कथन एवं अनुमान की तुलना में सत्य अनंतगुणा होता है | निरपेक्ष भाव पक्ष तो मात्र अनुभव गम्य ही होता है जबकि कथन तो कथंचित सापेक्ष के साथ ही सत्य हो सकता है | हमारी जिम्मेदारी है कि सापेक्ष सत्य से निरपेक्ष सत्य को पहचाने एवं अनुभव करें |

[1]*विषय वस्तु* - मतिःस्मृतिःसंज्ञाचिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम्।१३। तदिन्द्रियानिन्द्रिय निमित्तम् ।१४। अवग्रहेहावायधारणाः ।१५। बहुबहुविधक्षिप्रानिःसृतानुक्तध्रुवाणांसेतराणाम् ।१६। अर्थस्य ।१७। व्यञ्जनस्यावग्रहः ।१८। नचक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ।१९।

.....

मतिज्ञान

अपर नाम – स्व-सम्वेदन ज्ञान, स्वानुभूति, इन्द्रिय ज्ञान, स्मरण, प्रत्यभिज्ञान, तर्क, स्वार्थानुमान, बुद्धि, मेघा, कोष्ठ बुद्धि-अनेकों ग्रंथों के विषय, सुना हुआ लिंग (चिन्ह,लक्षण), व्याकरण, विषयानुसार कमरे में बीज की तरह प्रथक-२ याद रखतेहैं / (जैनेन्द्र सिद्धांत कोष भाग १ पृ ४५०), बीज बुद्धि - टीका करने की शक्ति द्वादशांग के बीज, पदानुसारी बुद्धि-पद के आगे(अनुसारिणी), पीछे (प्रतिसारिणी) या दोनों (उभयानुसारिणी) अनुसार, संभिन्न श्रोतृ बुद्धि- कर्ण इन्द्रिय के विषयों में एक साथ तिर्यंच, मनुष्यों के कोलाहल में सभी को प्रथक -२ सुन लेते हैं, विज्ञान, उपलब्धि, भावना, उपयोग /

आ.अमृतचन्द्र – तत्वार्थसार – श्लोक १९ - मतिज्ञान के ६ भेद – स्व-सम्बेदन, विज्ञान, स्मरण, प्रत्यभिज्ञान, तर्क, स्वार्थानुमान /

समयसार गाथा २७१ – अध्यवसान, विज्ञान, बुद्धि-बोधन मात्र, मति–मनन, जानना, मानना, व्यवसाय-व्यवसान, काम में लगे रहना, निश्चय होना, उद्यमी होना मात्र, अध्यवसान-स्व पर का अविवेक, मिथ्या निश्चय, विज्ञान-विज्ञप्ति मात्र, परिणाम- चेतन के परिणमन, चित्त - चेतन मात्र, भाव-चेतन के भवन मात्र एकार्थवाची हैं /

परिभाषा

मतिज्ञान – पराश्रय की बुद्धि छोड़कर दर्शनोपयोगपूर्वक स्वसन्मुखता से प्रकट होनेवाले निज आत्मा के ज्ञान को मतिज्ञान कहते हैं। अथवा इन्द्रियाँ और मन हैं निमित्त जिसमें, उस ज्ञान को मतिज्ञान कहते हैं।मन एवं इन्द्रियों के सानिध्य में जो स्वतंत्रता से दर्शन पूर्वक जानता है वह मतिज्ञान /[2]

१- *एकेन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय तक मतिज्ञान कहने का आशय इन्द्रियों से ज्ञान उत्पन्न होना सिद्ध नहीं करता वरन बढती हुई योग्यता को नापने/ समझाने का बाह्य साधन है /*

२- *मतिः– ६ इन्द्रियों से वर्तमान कालीन पदार्थ का अवग्रहादि रूप ज्ञान /*

३- *मनन – "पठन करेंगे मनन करेंगे /" = रूचि के विषय का स्वतः घोलन /*

[1] *–तत्त्वार्थ सूत्र /१*

[2] *–तत्त्वार्थ मणिप्रदीप ४०*

४- *अभिप्राय कहलाता है जैसे - "मेरी मति व्यवस्थित हो गई हैं"*[3]

५- *"कछु सुधि-बुधि नाही रई है, मिथ्या मति छाई गई है |"– आलोचना पाठ*

६- *मति/ भाव भासन ही आपको पाप करने से बचाती है मोक्ष मार्ग में बनाये रखती है |*

७- ***असंज्ञी को इन्द्रिय संस्कार से जानना होता है |***

८- ***श्रुतं अनिन्द्रियस्य = संज्ञी को मन से जानना होता है |***

९- ***एकेन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय तक यथायोग्य परिभाषा घटित करना |***

१०- ***क्षपक के जघन्य काल = १ सेकंड से उत्कृष्ट दर्शनोपयोग का काल बिशेषाधिक है उससे चाक्षुस ज्ञानोपयोग का काल दूना है इससे कर्ण इंद्रिय ज्ञानोपयोग का काल बिशेषाधिक है इससे घ्राण इन्द्रिय ज्ञानोपयोग का काल बिशेषाधिक है एवं इससे जिव्हा इन्द्रिय ज्ञानोपयोग का काल बिशेषाधिक है इससे मन वचन काय योग का उत्तरोत्तर काल बिशेषाधिक है | काय योग से स्पर्शन इससे आवाय और इससे ईहा काल उत्तरोत्तर काल बिशेषाधिक है | ईहा से ज्ञानोपयोग का काल दुगुना है |***[4]

११- [5]***कुमतिज्ञान- परोपदेश के बिना विष, यंत्र, बंधन, कूट आदि (बम, एलोपेथी या मांसाहारी चिकित्सा, दूसरों को दोष देना, कलह करना, अपने दोष न मिटाकर छिपाकर रखने की बुद्धि, स्वयं के दोष एवं दूसरों के गुण गोपित करना, आत्म-हित से दूर रहने वाला) में बुद्धि प्रवृत्त होती है | उपदेश पूर्वक यही कुश्रुतज्ञान कहलाता है | मिथ्या दर्शन के उदय के साथ वाला ज्ञान कुमति ज्ञान कहलाता है | एकत्व ममत्व, कर्तृत्व-भोक्तृत्व के भाव |***

चरणानुयोग / प्रवृत्ति अनुसार कुमतिज्ञान यहाँ कहा है, जबकि श्रद्धा अपेक्षा मिथ्यादर्शन के साथ होने वाला सभी ज्ञान कुमतिज्ञान कहलाता है |

१२- उपदेश प्रधान – हिन्सादी के उपाय को मतिज्ञान, अन्य मत के शास्त्र का अभ्यास कुश्रुत ज्ञान, बुरा दिखे भला न दिखे तो विभंग ज्ञान | इन्हें छोड़ने की मुख्यता से कहा है | मिथ्या दृष्टि के सारे ज्ञान मिथ्या ही होते हैं ऐसा ही मानना |

१३- ***सकल द्रव्यों की कुछ पर्यायें मतिज्ञान का विषय बनती है | श्रुतज्ञान-उपदेश के द्वारा कुछ पर्याय ज्ञान का विषय बनती है एवं नौ इन्द्रियावरण कर्म के क्षयोपशम से अतीन्द्रिय द्रव्य भी***

---

[3] *–प्रवचनसार गाथा ८२ टीका, आ.अमृतचन्द्र |*

[4] ***-पं रतनचन्द्र मुख्त्यार अभिनन्दन ग्रन्थ भाग १ पृष्ठ १४०/ जय धवला पु १- पृ ३१८-१९*** [4]जैनेन्द्र सिद्धांत कोष भाग ३

मन के माध्यम से ज्ञान का विषय बनतेहैं /

१४- एक समय में ज्ञान अनेकार्थ ग्राही होता है /

जानने की विधि - Gresping – Prociedure

दर्शनोपयोग- अनाकार उपयोग= निर्णय रहित	*ज्ञान गुण की पर्याय - ज्ञानोपयोग = साकार उपयोग - निर्णय सहित Decision making* *मतिज्ञान के भेद* V			
-	*अवग्रह - Perception* ***किंचित विशेष सहित ज्ञान[6]***	*ईहा- Conception eagerness*	*अवाय-निर्णय Judgment*	*धारणा Retention*
सार >>>>	*अर्थावग्रह – समझ में आना/ छहो इन्द्रिय का विषय / बुद्धिपूर्वक स्थूल ज्ञान (उपयोगरूप)* *व्यन्जनावाग्रह – समझ में नहीं आया/ अबुद्धिपूर्वक सूक्ष्म ज्ञान, स्पर्शन, रसना, घ्राण, कर्ण इन्द्रिय का विषय न बन पाना /*	*श्रद्धा दिशा देती है /* सम्यक-मिथ्या।	*पुरुषार्थ मति, स्मृति, संज्ञा, चिंता, अभिनिबोध, बहु- बहुविध, एक- एकविध, क्षिप्र- अक्षिप्र, अनि:सृत- नि:सृत, उक्त-अनुक्त, ध्रुव-अध्रुव / प्रमाण, नय, निक्षेप, लक्षण /*	***निर्विकल्प रूप से याद (लब्धरूप) रहना /***
दृष्टांत V	*अर्थावग्रह के २ भेद – विशद एवं अविशद*	*मति चेष्ठा*	*मति व्यवस्थित होना*	***स्मृति***
बाजार का दिखना	*अनेक फल*	*इच्छित फल का चयन*	*रस निकालने की प्रक्रिया*	*पात्र में रस रहना /*
बाजार का दिखना	*सब्जी मार्केट*	*इच्छित सब्जी*	*भाव कर खरीदने का निर्णय*	*थेले में रखे रहना /*

[6] *भावदीपिका-पृ-९२*

अवग्रह subject to know-

१- अपरनाम- अवधान-अन्य पदार्थों से पृथक करके विवक्षित अर्थ को जानता है (अवधान प्रयोग स्मृति की विशेषता प्रायः मानी जाती है | श्रीमद जी ने १०० एवं अजीतचन्द्र सागर ने ५०० अवधान करके दिखाए हैं |), सान-अनध्यवसाय नाशी, अवलंबना-निमित्त के अवलंबन से, मेधा = टेलेंटेड, शार्प बुद्धि, मेधावी कहलाता है | [7] (इमेजिनेशन) |

अवधान – धारणा के बल पर नहीं अवग्रह के बल पर होता है क्योंकि धारणा का विषय भी अवग्रह न होवे तो अवधान कैसे करेगा |

अ-अर्थावग्रह –able to know/ Identify प्रगट पुद्गल विषय का छह इन्द्रियों का बुद्धि गोचर विषय - अर्थ पर्याय | चक्षु एवं मन (विषय अप्राप्यकारी = दूर से जानने वाला) का विषय होने से अर्थावग्रह ही होता है |

चक्षु एवं मन से अर्थावग्रह ही कम ज्यादा होता है | व्यंजनावग्रह कभी नहीं होता है |

भेद [8]

१- विशद अर्थावग्रह- निर्णय रूप होता हुआ अनियम से ईहा, अवाय, और धारणा ज्ञान की उत्पत्ति में कारण होता है |

[9] "अवग्रह से बीज बुद्धि ईहा अवाय से पदानुसार बुद्धि धारणा से कोष्ठ बुद्धि, बहु-बहुविध, क्षिप्र आवरण के क्षयोपशम से संभिन्न सश्रोतृ बुद्धि होती है |"

२- अविशद अर्थावग्रह – जो भाषा, आयु व रूपादि विशेषों को ग्रहण न करके व्यवहार के कारण भूत पुरुष मात्र के सत्वादी विशेष को ग्रहण करके, अनियम से ईहा, अवाय, और धारणा ज्ञान की उत्पत्ति में कारण होता है |

विद्वान एवं आचार्य में अंतर करने योग्य नहीं है अवग्रह में जब एक ही जीव के दो समय में अंतर दीखता है एक ही आचार्य एक ही गाथा प्रवचनसार गाथा १७२ की टीका ५ स्थान पर ५ प्रकार की मिलती है जिसमें ३ स्थानों पर तो टीकाकार एक ही हैं | अन्य ३ स्थानों पर भी अन्य आचार्यों की टीका में भी अंतर दिखे तो क्या आश्चर्य जाओ कोई नहीं |

ब- व्यन्जनावग्रह- unable to Identify (व्य=व्यक्त अर्थात भाव, अंजन=छिप गया) अव्यक्त – अस्पष्ट या अप्रगट पदार्थों के अवग्रह को | चक्षु एवं मन (विषय अप्राप्यकारी = दूर से जानने वाला) इन्द्रिय के सिवाय स्पर्शन, रसना, घ्राण, एवं कर्ण इन्द्रिय के अबुद्धि गोचर विषय अर्थात

---

[7] - धवला १३/ २४२

[8] तत्वार्थ सुधा –पृ -२२३

[9] धवला पुस्तक ९ / पृ ६०

अप्रगट पदार्थों का ज्ञान /- स्वप्न, अनेक प्रकार के कोमल स्पर्श, कोलाहल, मिश्रित स्वाद, अनेक प्रकार की सुंगंध-दुर्गन्ध का अनुभव परन्तु भिन्न-२ जानना कठिन है / व्यक्त ग्रहण करने के पहले व्यन्जनावग्रह होता है /

२- *अवग्रह आदि में पूर्वोत्तर ईहा आदि के साथ कारण कार्य सम्बन्ध है / और अधिक-२ स्पष्टता बढती जाती है /*

३- *अवग्रह के बाद ईहा-अवाय-धारणा अवश्य ही हो ऐसा आवश्यक नहीं है /*[10] *(इसका यह आशय नहीं समझना चाहिए कि अवग्रह सदा कमजोर ही होता है जिससे ईहा-आवाय नहीं हो रही; वरन वह इतना समर्थ भी होता है कि उस ज्ञान में इसकी आवश्यकता ही नहीं बची /)*

४- ***विषयों का १- अवग्रह २- ईहा ३- अवाय ४- धारणा चारों का विषय बनना आवश्यक नहीं है / मात्र १, २, ३, या ४ का विषय बनता है / अवग्रह से संशय ही हो आवश्यक नहीं, ईहा हो तो निर्णय ही हो आवश्यक नहीं और निर्णय होने पर भी धारणा ही हो आवश्यक नहीं / अर्थात चारों की स्वतंत्र योग्यता है /***

५- *अवग्रह निर्णायक होता है संशयात्मक नहीं /*[11]

६- *एक ही ज्ञान पर्याय के २ भेद होते हैं लब्धि एवं उपयोग /*

७- *अर्थावग्रह तो ५ इन्द्रियों और मन से होता है / व्यंजनावग्रह चक्षु एवं मन से नहीं होता है / ये दोनों अप्राप्यकारी होने से कम जाने या ज्यादा जाने परन्तु स्पष्ट जानते ही हैं / अर्थात शेष ४ इन्द्रियों से व्यंजनावग्रह होता है /*

८- *वस्तु का निर्णय होने पर जब ज्ञान में प्रमेय स्पष्ट होता है तो नाम सुनते या विचारते ही विशद अवग्रह में अनुभव हो जाता है /*

९- *प्राप्त अर्थ के प्रथम ग्रहण के समय तो व्यन्जनावग्रह ही होता है किन्तु बाद में उसका अर्थावग्रह भी हो सकता है /*

१०- *ज्ञान स्वाबलम्बी होता है / कथन पराबलम्बी होता है इसका आशय स्मृति के बल पर अनुभव हो यह आवश्यक नहीं है / एक ही पर्याय में अविभागी प्रत्यच्छेद ईहा के , अवाय, धारणा के भी हो सकते हैं परन्तु उनका स्वभाव अतीन्द्रिय आत्म साधक*

[10] *धवला ६/१८ एवं ९/१४८*

[11] *- राज. १/१५*

नहीं होते हैं अवग्रह के अंश सीधे जानने में समर्थ होते हैं | यह बात स्वयं की योग्यता से सिद्ध होती है | जो अंश पर मुखी हो वह तो सहाय ज्ञान कहलाता है | लेकिन योग्यता सदा स्व सहाय या असहाय ही होती है |

११- अर्थावग्रह प्राप्त अप्राप्त सभी का होता है | निर्विकल्प है, समझ रूप है, भावभासन, प्रतीति रूप है |

१२- 'सूझ-बूझ' शब्द साहित्य में मतिज्ञान के लिए प्रयुक्त होता है | सूझ = अवग्रह एवं बूझ = अवाय | लोक में यह आत्म विश्वास का जनक है,

१३- अवग्रह से ईहा का विषय बनने वाला ज्ञान अर्थावग्रह कहलाता है | परन्तु असन्ख्यातवा भाग ईहा का विषय बनता है |

१४- व्यंजनावग्रह (अज्ञान, अरुचि) एवं संशय (द्विकोटी स्पर्शी, निर्णय की रूचि) में अंतर है |

१५- योग्यता (वय एवं बिशुद्धि) अनुसार अवग्रह होता है |

१६- जड़ प्रतिज्ञा में मात्र अवग्रह होता है-क्रिया जड़त्व है | सामायिक में नींद आने का कारण, पूजा में अनुत्साह का करण अवग्रह से ईहा का न होना ही है |

१७- प्रवचन समय यही काम करता है, बोलते-२ भूल जाने पर यही अस्पष्ट हो जाता है |

१८- ज्ञान की योग्यता पूर्वक अवग्रह होता है | ज्ञेय अनुसार नहीं | तीन काल के ज्ञान पर्याय की बनने वाली पर्याय-ज्ञेय नक्की है | कर्तृत्व का अभाव है |

१९- पुरुषार्थ की शैली – जहाँ रूचि वहां वीर्य का स्फुरण, वह ज्ञेय सहज बन जाता है |

२०- पुरुषार्थी को अप्रयोजन भूत प्रसंग का व्यंजनावग्रह होता जाता है और केवली को कुछ भी अर्थावग्रह एवं व्यंजनावग्रह नहीं रहता |

२१- संसद में निर्णय करने का आधार है, सभी का एक ही समय पर अलग-२ अवग्रह होने से सभी के विचार विमर्श से उत्कृष्ट निर्णय करने में मदद मिलती है | कभी क्षद्मस्थ को स्वयं से निर्णय नहीं लेना चाहिए | इससे सामाजिक एकता का विकाश होता है |

२२- अवग्रह चाहने से नहीं होता है क्योंकि इच्छा एवं अवग्रह में अतद्भाव है |

२३- ज्ञान स्वभाव का अज्ञान मिथ्याज्ञान है जो घातिया है अज्ञान औदयिक भाव से बंध नहीं होता है जो १२ वे गुनस्थान तक होता है |

२४- अवग्रह से सम्यक दर्शन नहीं सम्यक दर्शन के समय का अवग्रह लो , १ इन्द्रिय से १२ वे गुनस्थान तक के मति ज्ञान का अवग्रह लो, अवग्रह से सम्यक्त्व मिथ्यात्व का

सम्बन्ध नहीं हाँ सत्य जानने पर भी न माने तो मिथ्यात्व, असंज्ञी भी निर्णय करते देखे जाते हैं |

२५- ज्ञाननय इसी अवग्रह का नाम है |

२६- ज्ञानी को आत्म तत्व का जिज्ञासु होने से उपसर्ग-परीषह, निंदा-प्रसंशा, अनुकूलता-प्रतिकूलता व्यंजनावग्रह रूप हो जाते है | फलतः निर्जरा होती है |

२७- सभी जीवों को एकसा अर्थावग्रह व्यंजनावग्रह नहीं होता है | चक्रवर्ती को कोलाहल में भी, १२ योजन पर्यन्त भी सुनने, सूर्य के विमान में जिनबिम्ब देखने की शक्ति रहती है |(२८ जुलाई कर्क राशि में सूर्य आता है उस समय होने वाली संक्रान्ति के समय दर्शन कर सकते हैं |- डॉ दीपक जैन शास्त्री, जयपुर)

२८- [12]इन्द्रियों का विषय ग्रहण शक्ति - क्षेत्र अपेक्षा

इन्द्रिय / जीव	१	२	३	४	५ असंज्ञी	५ संज्ञी
स्पर्शन	४००धनुष	८०० धनुष	१६०० धनुष	३२०० धनुष	६४०० धनुष	९ योजन
रसना	-	६४ धनुष	१२८ धनुष	२५६ धनुष	५१२ धनुष	९ योजन
घ्राण	-	-	१०० धनुष	२०० धनुष	४०० धनुष	९ योजन
चक्षु	-	-	-	२९५४ योजन	५९०८योजन	४७२६२.७/२० योजन
कर्ण	-	-	-	-	८००० धनुष	१२ योजन
मन	-	-	-	-	-	सर्व लोकवर्ती = त्रिलोक-त्रिकालवर्ती

- एक धनुष = १.६४ मीटर , ५०० धनुष = ८२० मीटर

२९- ईहा- अवग्रह के द्वारा ग्रहण किये गये पदार्थ में उसके विशेष को जानने की इच्छा |[13] संशय नाशार्थ चेष्ठा | यहाँ निर्णय न होने पर भी संशय, अनध्यवसाय नहीं कह सकते हैं |

३०- eager to decide निर्णय की रूचि, अभिलाषा |
अपरनाम- ऊहा-तर्कना, अपोह-विकल्पों का निराकरण, मार्गणा- अन्वेषण, गवेषणा-खोज, मीमांसा-विशेष वर्णन |[14]

[12] जैनेद्र सिद्धांत कोष भाग १ पृष्ठ ३०६
[13]-सर्वार्थ सिद्धि १/१५
[14]- धवला १३/२४२

ज्ञान की योग्यता पूर्वक ईहा होती है / ज्ञेय अनुसार नहीं / साधना में अप्रयोजन भूत विषयों के जानने का उत्साह निवृत्त होता जाता है / सत्य ज्ञान माना गया है / सुदृढ़ नहीं होता है / [15]

मेरा भाव – अनुशीलन, खोज, कौतुहली, रूचि /

३१- श्रुतज्ञान में ईहा मन से ही होती है मतिज्ञान में नहीं /- श्लोक वा.

३२- तत्प्रति प्रीति चित्तेन एन वार्तापिहि श्रुतः /

निश्चितं स भवेत् भव्यो भावि निर्वाण भाजनं // - पद्मनंदी पञ्चविंशतिका

३३- "पर द्रव्यन तें भिन्न आप में रूचि सम्यक्त्व भला है /" में रूचि ईहा का द्योतक है /

३४- 'अयि कथमपि मृत्वा तत्व कौतूहली सन /' यहाँ ईहा की चर्चा या प्रेरणा है /

३५- अभेद आत्म तत्व की ईहा हो तो कार्य-सम्यग्दर्शन अवश्य हो /

३६- स्वदोष रक्षण वृत्ति न हो तो मति-श्रुत ज्ञान लाभकारी हो /

३७- जो आत्म तत्व के सिवाय अन्य को ईहा का विषय बनाते हैं उनको उसकी अवाय एवं धारणा बनती जाती है फलतः उन्हें उतनी कषाय का निमित्त पाकर राग द्वेष का बंध भी होता जाता है / मति अनुसार गति अर्थात क्रिया कुछ भी हो ऊपर से कुछ भी पढ़ो-सोचो परन्तु ईहा बदले बिना ईहा अनुसार गति बंध हो जाता है /

३८- ईहा अनुसार ही संक्रमण आदि होगें /

३९- निज हित की ईहा बिना की पढाई बड़ी बोरिंग लगती है /

४०- ईहा ही क्षयोपशम एवं विशुद्धि वृद्धि का उपाय है और यही व्यवहार पुरुषार्थ है / इससे ही समर्पण जन्मता है /

४१- निज हित की ईहा बिना के षट आवश्यक आनंद रहित रहते हैं /

४२- ज्ञेयो की ईहा - जिज्ञासा ही सर्व असंयम और सर्व दुखो का मूल है /

४३- ईहा के कारण सदा बंध एवं निर्जरा होती रहती है / ज्ञानी के भोग एवं तंदुल मच्छ को निरन्तर क्रमशः निर्जरा एवं बंध कहा है /

४४- ज्ञान बंध का कारण न होने पर भी अज्ञान को बंध एवं ज्ञान को निर्जरा-मोक्ष का कारण कहा जाता है / जबकि इसमें बंध का कारण मोहनीय कर्म है / यहाँ सामान्य जीवों को ज्ञान थर्मा मीटर की भाँति होने से यहीं विकार निर्विकार कहने की व्यवहार शैली है /

४५- अवाय-

[15] – तत्वार्थसार सूत्र २१-२३ की टीका पृ १९-२०

अपरनाम- व्यवसाय, बुद्धि, विज्ञप्ति, आमुन्डा, प्रत्यामुंडा |[16]
निर्णय - निर्णय के बाद जिज्ञासा शांत होनेसे उपयोग निर्विकल्प हो जाता है | दही भाकर मख्खन निकालना | तत्व निर्णय में अनंत पुरुषार्थ | ईहा से अधिक सुदृढ़ होता है |

४६- *अंधे लोग भी निर्णय कर लेते हैं |*

४७- *विनय, एकांत, संशय, विभ्रम, अनध्यवसाय रहित निर्णय मोक्षमार्ग में उपयोगी है | इसके बाद मोक्षमार्ग स्वतः स्फूर्त प्रगटता जाता है | परीक्षा में तो स्वयं का ही विवेक चाहिए | - मोक्षमार्ग प्रकाशक*

४८- *धारणा अनुपयोगी एवं अवग्रह उपयोगी होता है | - प.अभय जी शास्त्री देवलाली १०-८-१९जयपुर स्मारक*

४९- *बहु (विपुल)-बहु विध – (विशुद्धि एवं क्षयोपशम अधिक हो तो बहुत एवं कम हो तो एक जानने में आते हैं इसी प्रकार सर्वत्र घटाना |) बहुत वस्तु या बहुत समूह एवं बहुत प्रकार के | 'बहु' शब्द संख्या एवं 'बहुविध' शब्द जाति वाचक हैं |*

५०- *ज्ञान निर्भार होता है हेंग नहीं होता, कर्ता बुद्धि वाले को भार | ज्ञान ज्ञेयों की भीड़ में से निकलता जाता है | जहाँ एक एक विध सोचना चाहिए वहां वहु - वहु विध सोचना विपरीत पुरुषार्थ की पहिचान है | लक्ष्य वाला व्यक्ति वहु - वहु विध नहीं सोचता |*

५१- *एकाग्रता- ज्ञानी वहु विध में से भी सिमटता जाता है उसका पुण्योदय भी जिन शासन प्रभावना का हेतु बन जाता है | ५६००० मुनिराज के नायक अनंतवीर्य ने केवलज्ञान ले लिया |*[17]

५२- *तीर्थ यात्रा में असफलता का कारण सारे कार्य करने की आदत, एक तीर से अनेक निशाने साधने की आदत |*

५३- *एक-एकविध – अबहु-अबहु विध (अल्प- अल्पविध)- विशुद्धि अधिक हो तो एक विध न हो तो एक या अल्प थोडे एवं एक प्रकार के जानने में आते हैं | प्रथम एक संख्या दूसरा 'एकविध' जाति सम्बन्धी हैं |*

५४- *एक ध्रुव को ही जानना , एक ही विधि से जानना, बहुत प्रवृत्ति करना पड़े या बहुत जाति के नयों-विकल्पों में से गुजरना पड़े तब भी एक ध्रुव को ही जानना |*

---

[16] - *धवला १३/२४३*

[17] – *पद्म पुराण ७८ वा सर्ग*

५५- क्षिप्र-अक्षिप्र – क्षयोपशम एवं विशुद्धि अधिक हो तो तीव्र- या शीघ्रता से कम हो तो धीमी गति वाले पदार्थ का – धीरे-२ से ज्ञान

५६- अनि:सृत-नि:सृत - Invisible– visible अव्यक्त-व्यक्त Face Reading का काम यहीं होता है / प्रत्येक घटना में कर्म का उदय, स्वयं का दोष, कर्तव्य, समता देखना / ज्ञान से ज्ञायक का, गुणस्थान से परिणमते हुए जीव का ज्ञान हो जाता है / इसी प्रकार कषाय से गुणस्थान का ज्ञान हो जाता है / अनुमान, स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क से होने वाला ज्ञान इसी का विषय है / इसी में स्त्री के नयन कमल दल के समान है उपमान अलंकार का ज्ञान भी आता है / अनि:सृत में संगीत के इशारे में समझना और नि:सृत में कुछ राग प्रगटने पर समझना /

५७- कम विशुद्धि में अनि:सृत अधिक बिशुद्धि में निसृत जानने में आता है /

५८- श्रुतज्ञान व्यामिज्ञान के द्वारा लोकालोक को जानता है / जिन्होंने अपना आत्मा जाना उन्होंने सबको जाना /[18]

५९- [19]जयधवल में आता है कि खम्भे का एक भाग देखते ही खम्भे का ज्ञान हो जाता है, उसी प्रकार मतिज्ञान केवलज्ञान का अवयव होने से उस एक अंश का ज्ञान होते ही केवलज्ञान की प्रतीति हो जाती है /

६०- उक्त-अनुक्त – कहा एवं अनकहा, नयों का प्रयोग, – उक्त से अनंत गुना अनुक्त समझे तो मोक्षमार्ग में आनंद हो / उक्त से अनंत गुना अनुक्त प्रवचन पठन में न लगाए तो निद्रा आएगी / सामायिक में भी अनुत्साह रहेगा / अनुक्त ज्ञान में १२ अंग का ज्ञान आ जाता है / दही को देखने या सूंघने से रस स्पर्श का भी ज्ञान अनुक्त ज्ञान है / लब्धि अक्षर रूप श्रुत ज्ञान से अव्यक्त पदार्थों का ज्ञान हो जाता है / अभिप्राय समझना अनुक्त है / न कहे जाने पर भी शेष पूरे भाव समझना अनुक्त ज्ञान है / वचनातीत भाव का ज्ञान होता है /

---

[18] परमात्म प्रकाश दोहा ९९-

[19] -आत्म धर्म मई २०१६ पृष्ठ ३५ –

६१- *अनुक्त अर्थात कर्ण इन्द्रिय के विषय में ईषत अनुक्त लेना संक्षिप्त से विशेष जानना | अन्य इन्द्रियों में भी अनुक्त अर्थात सुने हुए विषय को छूना, देखना, चखना आदि लेना |*

६२- *ध्रुव-अध्रुव – सतत- असतत या थिर-अथिर, नित्य-अनित्य पदार्थों का ज्ञान | पुरुषार्थी अध्रुव में भी ध्रुव देख लेते हैं | निर्णय का टिकना ध्रुव है | ध्रुव आत्मा का ज्ञान मतिज्ञान में होता है | हीनाधिकता रहित ज्ञान ध्रुव कहलाता है | एवं हीनाधिकता सहित ज्ञान अध्रुव कहलाता है |*

६३- *पाँचों ज्ञान अशब्द होते हैं | निर्विकल्प – अभेद एवं सविकल्प – विषय सहित होते हैं |*

६४- *धारणा – अपरनाम- धरणी, स्थापना, कोष्ठा, प्रतिष्ठा |*[20]
लब्धि – ज्ञान की योग्यता पूर्वक धारणा होती है | ज्ञेय अनुसार नहीं | राग-द्वेष का कारण धारणा का दुरुपयोग ही है |

६५- *परिभाषा - जो ज्ञान पूर्वानुभूत वस्तु को 'वह' इस रूप में विषय बनाता है, स्मृति कहलाती है |*

६६- *मनोविज्ञान - स्मृति बिना निर्णय, लोक व्यवहार की स्थापना, कार्य सम्पादन नहीं हो सकता है |*

६७- *लब्धि में से उपयोग क्या होना है यह भी निश्चित है | सामाईक का स्वरूप है उपयोग में शुद्धता आनंदरूप परिणमन |*

६८- *ज्ञान का वेदन नहीं कषाय के लक्ष्य से दुःख का एवं त्रिकाली के लक्ष्य में सुख का वेदन होता है |*

६९- *निद्रा में स्मृति तक कमजोर हो जाती है, ज्ञान के अन्य विकास की तो बात ही नहीं हैं, अतः निद्रा में समकित नहीं होता है |*

७०- ***ज्ञान की धारणा-योग्यता विशेष से स्वप्न आतेहैं |***

७१- *स्मृति से आक्रान्त होने से एकेन्द्रिय का बंध होता है | ज्ञेय आक्रान्तता ज्ञान नाशक है |(मिथ्यादृष्टी को)*

[20] - *धवला १३/२४३*

७२- *स्मृति से बचने, लक्ष्य के प्रति गरज की कमी, अहंकार, प्रमाद, अरुचि, उपेक्षा एवं स्मृति के दुरूपयोग से स्मृति घटती है |*

७३- *स्मृति का सदुपयोग पतन से बचाता है | लाख कष्ट व उपहास सहकर भी छल-प्रपंच के पोषण में स्मृति नहीं लगाना | जगत पर रीझना भी नहीं और किसी को रिझाना भी नहीं |*

७४- *स्मृति से जागृतता, एकाग्रता, लक्ष्य के प्रति समर्पण बढता है |*

७५- *सही समय पर सही स्मृति (अकर्ता, ज्ञाता, पुण्य-पाप का बंध, उदयादि) शिथिलाचार/ मोह से बचाती है और सतत आनंद जननी है |*

७६- *पापोदय में भी प्रभुता की स्मृति रखें |*

७७- *बुरी स्मृतियां (स्वयं कृत दोषों का स्मरण) अप्रभावी ज्ञायक की परिक्षा लेने आती है न कि एकत्व-ममत्व, कर्तृत्व-भोक्तृत्व के लिये है |*

७८- *स्मृति अर्थात गढे मुर्दे उखाडना जो किसी काम के नहीं दुर्गन्ध देते हैं | अतःप्राग्भाव अनुभवना |*

७९- *छह इन्द्रियों के विषयों की स्मृति संयम घाती है |*

८०- *स्मृति की भावना भाने से निदान बंध वश ११ अंग नौ पूर्व का ज्ञाता हो जाता है आत्मज्ञान नहीं | आत्मज्ञानी को केवलज्ञान एवं उसके पूर्व होने योग्य ज्ञान का सम्पूर्ण विकास स्वतः मिलता है | आतम भावना भावता जीव लाहे केवलज्ञान रे |*

८१- *मोहाविष्ट ज्ञान श्रेष्ठ स्मृति का भी अनादर करता है जिससे मति-श्रुत ज्ञानावरण कर्म का बंध होता है |*

८२- *स्मृति का तिरस्कार समस्त अपराध का मूल है | जिसका दण्ड अनंत संसार है |*

८३- *स्मृति से भवितव्य का अनुमान लगाया जा सकता है |*

८४- रूचि से स्मृति दृढ़ होती है | अरुचि वाले विषय याद कराने पड़ते है |

८५- प्रमाद में सम्यकदर्शन नहीं होने का कारण है कि उसमे इष्ट विषय का तिरस्कार होता है |

८६- स्मृति की अल्पाधिकता दीनता एवं प्रभुता अनुभवने के लिये नहीं वरन भिन्न प्रभुता/ लघुता अनुभव करने के लिये हैं |

८७- धारणा एवं स्मृति में अंतर है | अवग्रह के समय जो ज्ञान होता है वह धारणा के बल से स्मृति होती है | स्मृति वर्तमान योग्यता है |

८८- "जिसका करना था सदा स्मरण उसका किया विस्मरण और जिसका करना था सदा विस्मरण उसका किया स्मरण, इसी से हो रहा निरंतर भाव करम व भाव मरण, कभी न छूटेगा तेरा भवसागर में जनम-मरण |"- श्रीमदजी

८९- देशना लब्धि में देशना एवं स्मरण, प्रायोगलब्धि में प्रत्यभिज्ञान तर्क अनुमान, करणलब्धि में सविकल्प स्व संवेदन आतेहैं |

९०- मति स्मृति में कारण है दोनों प्रत्यभिज्ञान में कारण है तीनों तर्क में एवं चारों पूर्वक अनुमान होता है |[21]

शंका समाधान – स्थान स्मारक शिविर दिनांक २-८-१९-से -११-८-१९

१- आत्मानुभूति अर्थ अवग्रह में होती है, इसलिए अर्थावग्रह निर्विकल्प होता है ?

समाधान – १- आत्मा अतीन्द्रिय पदार्थ है, इसलिए उसको जानने वाला ज्ञान भी अतीन्द्रिय ही होता है | उसमें मतिज्ञान और श्रुतज्ञान ऐसा भेद नहीं होता (समयसार१४४) २- अर्थावग्रह निर्विकल्प नहीं होता है, क्योंकि ज्ञान का स्वभाव सविकल्प ही होता है | ३- आत्मानुभूति मतिज्ञान में नहीं होती है | मतिज्ञान से आत्मानुभूति की प्रक्रिया प्रारम्भ होती है |

मेरा समाधान –

[21] - ***श्लोकवार्तिक ३/२०३***

१ – ***मतिज्ञान इन्द्रिय और मन के निमित्त के बिना भी संभव है; अन्यथा उससे इन्द्रियातीत –विकल्पातीत आत्मानुभूति कैसे होगी ? जब आत्मा अमूर्तिक पदार्थों को जानता है, विशेषकर आत्मसम्मुख होता है; तब उसमें इन्द्रियों और मन की निमित्तता की आवश्यकता नहीं होती।*** *तत्वार्थ मणि प्रदीप ४५*

२ – *मतिज्ञान निसर्गज होता है | श्रुतज्ञान अधिगमज – देखिये अधिगमज सि.को.भाग-१*

३ – *स्वानुभूति स्वानुभुत्यावरण कर्म के क्षयोपशम से लब्धि रूप ज्ञान में होती है और उपयोगात्मक ज्ञान होने पर सम्यक्त्व होता ही है | ४०३-६ पंचाध्यायी*

४ – ***हेतुवश स्वगुण का पररूप से अविरोधपूर्वक उपचार करना जैसे- अर्थ (स्वपर) विकल्पात्मक ज्ञान (जानना) प्रमाण हैं |***[22]

५ – *ज्ञान में विकल्प का अर्थ बंध का हेतु वाला चारित्र गुण की पर्याय नहीं लेना चाहिए |*

६ – चिद्विलास पृष्ठ २५ - "जो जानने मात्र परिणमन है, उसे निर्विकल्प सम्यक ज्ञान कहते हैं , तथा जो स्व ज्ञेय भेदों को पृथक-२ और पर ज्ञेय भेदों को पृथक-२ जानता है , उसे सविकल्प सम्यक ज्ञान कहते हैं"

७ – *धवला – अवग्रह में सदा संशय ही नहीं होता है | जैनेन्द्र सि.कोश भाग ३ (अर्थात विशदावग्रह में स्पष्ट निर्णायक ज्ञान भी होता है |)- धवला ९।४,१,४५।१४८।५ (जै.सि.को.-२५३/३)*

८ – *अदृष्ट एवं अश्रुत का अवग्रह मन से अनुक्त में आता है |- धवला ९।४,१,४५।१५४।६ एवं ध.१३।५,५,३५।२३९/६ (जै.सि.को.-२५८/३)*

९ – *प्रवचनासुधा भाग ९ पृष्ठ ५३ – कुम्भोज में विद्वानों समंतभद्राचार्य के सामने चर्चा हुई थी कि भव्य अभव्य का ज्ञान होता है कि नहीं हमने कहा – धवल एवं सर्वार्थ सिद्धि में आता है कि – "मतिज्ञान के निर्मलत्व में अवग्रह ईहा अवाय धारणा में यह प्राणी भव्य है या अभव्य है ? मतिज्ञान में सम्यक्त्व का निर्णय हो जाने से भव्य का निर्णय हो जाता है |"*

१० – ***"यद्यपि ज्ञान दूसरों की अपेक्षा किये बिना ही स्वरूप सिद्ध होने से सद्रूप है, तथापि हेतु के वश से यहाँ उसका दुसरे की अपेक्षा से उपचार किया जाता है |"२***

११ – ***ज्ञान इंद्रियों से नहीं जानता | अतः ज्ञान के परिणमने में इन्द्रियों या निमित्तों की पराधीनता नहीं है |***

१२ – *मतिज्ञान आत्म सन्मुख होने पर अतीन्द्रिय ही होता है | २- मतिज्ञान जिस अपेक्षा सविकल्प कहा गया है उस अपेक्षा तो केवलज्ञान भी सविकल्प है | अर्थात विषय सहित...* ***'विकल्पों***

[22] & २ *परम भाव प्रकाशक नयचक्र पृ १७०*

के सद्भाव में शुद्ध चेतना सम्भव नहीं हैं ऐसा मानना ठीक नहीं हैं" –पंचाध्यायी उत्तरार्द्ध ९१५ /३- आत्मानुभूति की प्रकिया मतिज्ञान एवं श्रुतज्ञान से प्रारम्भ भी होती है और पूर्ण भी होती /

१३– मतिज्ञान जब आत्म सन्मुख होता है तब इन्द्रिय एवं मन के निमित्त बिना होने से निर्विकल्प होता है /

१४– एक वार मगन भाई दफ्तरी - मतिज्ञान तो परोक्ष है ? स्वामीजी - भाई ! मतिज्ञान पर को जानने के लिये भले ही परोक्ष हो परन्तु आत्मा को जानने के लिये तो प्रत्यक्ष ही है /आत्मधर्म- अलिंग ग्रहण के बोल

१५– पंचाध्यायी १/ ७०६-७-११-१२ – स्वानुभव के समय मति श्रुत ज्ञान प्रत्यक्ष हैं क्योंकि वहां मात्र भाव मन काम करता है / आत्मा को लक्ष्य बनाकर उत्पन्न मति श्रुत ज्ञान को अनुभव प्रत्यक्ष कहतेहैं / - जैन सिद्धांत प्रवेशिका प्रश्न ५७४, ५७६-७८ तथा फुट नोट

१६– रहस्य पूर्ण चिट्ठी में दोनों से अनुभव लिखा है भिन्न करने वाली कोई बात इसके प्रवचन में नहीं आई है / देखिये पृष्ठ ४४ से ४६ अध्यात्म संदेश / दोनों ज्ञान आत्म सन्मुख हुए तो दोनों का भेद करना या स्व-पर का भेद योग्य नहीं है /

१७– रामजी भाईजी की टीका पृ ५२- "इन्द्रियाँ पुद्गल को एवं मन विकल्पों को जानने में निमित्तभूत होता है जो ज्ञान वहां प्रवृत्त होता था वही ज्ञान निजानुभव में वर्तने लगा यह ज्ञान अतीन्द्रिय है / चूँकि मन का विषय मूर्तिक अमूर्तिक दोनों हैं अतः मन सम्बन्धी परिणाम स्वरूप के विषय में एकाग्र होकर अन्य चिंतवन का निरोध करता है, इसलिए उसे उपचार से मन के द्वारा हुआ कहा जाता है / ऐसा अनुभव चतुर्थ गुणस्थान से ही होता है /-रहस्यपूर्ण चिठ्ठी ४-७"

१८– पर पदार्थ की प्रसिद्धि के कारण इन्द्रिय द्वारा तथा मन द्वारा प्रवर्तमान बुद्धि को मर्यादा में लाकर अर्थात् पर पदार्थों की ओर से अपना लक्ष्य खींचकर जब आत्मा स्वयं स्व सन्मुख लक्ष करता है तब, प्रथम सामान्य स्थूलतयः आत्मा सम्बन्धी ज्ञान हुआ, वह आत्मा का अर्थावग्रह हुआ, तत्पश्चात स्व - विचार के निर्णय की और उन्मुख हुआ सो ईहा, और निर्णय हुआ सो अवाय अर्थात् ईहा से ज्ञात आत्मा में यह वही है अन्य नहीं, ऐसा दृढ़ ज्ञान अवाय है / आत्मा सम्बन्धी कालान्तर में संशय तथा विस्मरण न हो सो धारणा है / इसके बाद यह आत्मा अनंत ज्ञानानंद शान्ति स्वरूप है, इस प्रकार मति में प्रलंबित तार्किक ज्ञान श्रुत ज्ञान है / भीतर स्व लक्ष्य में मन इन्द्रिय निमित्त नहीं है / जब जीव उससे अंशतः पृथक होता है तब स्वतंत्र तत्त्व का ज्ञान करके उसमें स्थिर हो सकता है / - रामजी भाई जी की टीका पृ ५६

१९- पृ ६९ रामजी भाई की टीका – उपदेश में आत्मा सुना यह मतिज्ञान विचार करके आत्म पदार्थ का भान हुआ यह श्रुत ज्ञान है / इसमें विचार करने वाली प्रक्रिया श्रुत्ज्ञान है, परन्तु निर्णय के बाद वह धारणा में चला गया / अतः मतिज्ञान बन गया /

२०- मतिज्ञान इन्द्रिय और मन को निमित्तकर होने पर भी अपने विषय को भेद किये बिना समग्र भाव से ग्रहण करता है; अतः वह स्वार्थ प्रमाण है / - जैन तत्त्व मीमांसा पृ २९२ श्रुत ज्ञान विकल्पात्मक उभयात्मक होने से दोनों रूप (स्वार्थ परार्थ प्रमाण) माना गया है / श्रुत ज्ञान में मन का जो विकल्प अखण्ड भाव से वस्तु को स्वीकार करता है वह प्रमाण ज्ञान है और जो विकल्प वस्तु के एक धर्म को मुख्यतः से ग्रहण करता है वह नय ज्ञान है /

२१- सर्वार्थ सिद्धि अ.१ सूत्र ६ – श्रुत को छोड़कर सभी ज्ञान स्वार्थ प्रमाण हैं, श्रुत ज्ञान ज्ञानात्मक होने से स्वार्थ एवं वचनात्मक होने से परार्थ प्रमाण होता है / अवधिज्ञान, मनःपर्यय ज्ञान और केवलज्ञान पर निरपेक्ष होकर जानने से स्वार्थ प्रमाण ही होते हैं /(यहाँ मतिज्ञान भी स्वार्थ है /)

२२- प्रथमोपशम सम्यक्त्व के समय स्वानुभव मतिज्ञान/ श्रुतज्ञान पर्याय (कषाय पाहुड जयधवल पुस्तक १२, पृष्ठ ३०४-५ परमात्म प्रकाश भाग २ दोहा क्र.३३,३४, अध्यात्म न्याय दीपिका पृष्ठ १३६-७)

२३- प्रस्थापक समय जो करणलब्धि के अधःप्रवृत्तकरण में मतिज्ञान वाला है निष्ठापन समय दर्शनोपयोग पूर्वक मतिज्ञान पूर्वक स्वानुभव होता है /

प्रस्थापक समय जो श्रुतज्ञान वाला जीव निष्ठापन समय मतिज्ञान में हो तब भी श्रुतज्ञान पूर्वक स्वानुभव होता है /

प्रस्थापक समय जो श्रुतज्ञान वाला जीव निष्ठापन समय श्रुतज्ञान में हो तब भी श्रुतज्ञान पूर्वक स्वानुभव होता है /

प्रस्थापक समय जो विभंगज्ञान वाला जीव निष्ठापन समय श्रुतज्ञान में हो तब भी दर्शनोपयोग पूर्वक मतिज्ञान पूर्वक स्वानुभव होता है /

सार - निष्ठापन समय (अनिवृत्तिकरण में) यदि दर्शनोपयोग या श्रुत्ज्ञान हैं तो मतिज्ञान में ही समकित होगा / दर्शनोपयोग पूर्वक मतिज्ञान होता है / श्रुत्ज्ञान मतिज्ञान पूर्वक या श्रुत्ज्ञान पूर्वक भी होता है /

(चार्ट ४९ पृष्ठ ७५ सम्यक्त्व सहायक चार्ट संग्रह – १०८ वीरसागर कृत) ९८२३२३११६४पूना

२४- स.१९८३ की साल – मति-श्रुतज्ञान पर की अपेक्षा से परोक्ष है, अर्थात् यह बात भी इसमें गर्भित है कि अपनी अपेक्षा से प्रत्यक्ष है /-स्वामीजी

२५- स.१९८० की साल बोटाद – १५०० लोग सुनने आते थे / स्वानुभव, प्रत्यक्ष अनुभव कहा सो भड़क गये / कोई भी महाराज अनुभव की तो कहते नहीं है / यहाँ कहते हैं कि आत्मा स्वानुभव

प्रत्यक्ष है / जैन दर्शन में जन्म मात्र से समकित माना जाता था / अब तो मात्र व्रत उपवास-चारित्र धारण करना शेष रह गया है ऐसा माना जाता था / विभाव क्या होता है यह नहीं जानते थे /

२६- जीव शब्द से जीव को जानना मतिज्ञान उससे जीव द्रव्य को जानना वह अक्षरात्मक श्रुत ज्ञान एवं अर्थ से अर्थान्तर का ज्ञान अनक्षरात्मक श्रुत ज्ञान कहलाता है /

२७- वर्ण से वर्णान्तर, पद से पदान्तर, शब्द से शब्दांतर का ज्ञान श्रुतज्ञान कहलाता है / भाव दीपिका / p-९३

२८- मतिज्ञान प्रमाण रूप है अतः समकित होना सम्भव नहीं है / क्योंकि पर्याय का निषेध नहीं कर सकता / शुद्ध नय का विषय है / यहाँ तो विषय की बात है अनुभव की नहीं इस विषय का ज्ञान या अनुभव होना भिन्न बात हो सकती है / अस्पष्ट ????

२९- पंचास्तिकाय / ता.वृ./४३ – निर्विकार शुद्धात्मा की अनुभूति के अभिमुख जो मतिज्ञान है, वही उपादेयभूत अनंत सुख का साधक होने से निश्चय से उपादेय है / और व्यवहार से बाह्य में जो भी साधक ज्ञान है वह भी उपादेय है /

३०- इन्द्रिय और मन के निरुद्ध होने पर अतीन्द्रिय ज्ञान विशेष रूप से स्पष्ट होता है / -तत्वानुशान १६०,१७२,१६६,१६७.

३१- "आत्मानुभव के समय युक्ति आदि का अवलम्बन नहीं है /"- नयचक्र वृहत २६६ (जैनेन्द्र सिद्धांत कोष भाग १ पृ ८१)

३२- 'विकल्पों के सद्भाव में शुद्ध चेतना सम्भव नहीं हैं ऐसा मानना ठीक नहीं हैं' –पंचाध्यायी उत्तरार्द्ध ९१५

३३- पंचाध्यायिकार अ.२/श्लोक ८७५ – मतिज्ञानावरण का एक भेद स्वानुभूत्यावरण करम है सम्यक दृष्टि को इसका क्षयोपशम होताहैं /

२- अर्थविग्रह प्रतीति है ?

समाधान – अर्थविग्रह प्रतीति भी नहीं है, क्योंकि प्रतीति श्रद्धा गुण की पर्याय है /

मेरा समाधान २- प्रतीति श्रद्धा गुण की पर्याय ही है / यह बात सही होने पर भी ज्ञान को ही उपदेश देते हैं कि तुम समझो, स्वभाव की प्रतीति करो मात्र प्रमेय में ही नहीं उलझे रहो / यह उपदेश शैली है वस्तु शैली नहीं / उपचरित करके ज्ञान में श्रद्धा का रूप होने से कहे जाने में विरोध नहीं है / स्व में एकत्व प्राप्त ज्ञान भेदविज्ञान को सहज ही प्राप्त होता जाता है / और यह मतिज्ञान में ही होता है /

३- अवग्रह का विषय असंख्यात है, इसलिए ईहा उसके भी असंख्यात्वे भाग को जानता है, अवाय उसके उसके भी असंख्यात्वे भाग को जानता है, और धारणा उसके भी असंख्यात्वे भाग को जानता है ?

समाधान – अवग्रह का विषय संख्यात ही है, इसलिए आगे-२ के ईहादि ज्ञान क्षयोपशम की विशेषता से उससे अधिक विषय को ही जानेगें |

शंका–समाधान ३- अवग्रह का विषय संख्यात ही है, इसलिए आगे -२ के ईहादि ज्ञान क्षयोपशम की विशेषता से उससे अधिक विषय को ही जानेगें | मेरी अभी पूर्ण सहमती नहीं बनी है |

यहाँ आपका आशय भाव का है या विषय भेद का ? ईहादि की प्रतीति कराने जैसा कोई दृष्टांत देवें तो आनंद आवे | अधिक विषय के स्थान पर अधिक स्पष्ट जानेगें यह मुझे समझ में आता है | जैसे आत्मा सुना अब इसकी ईहा हुई तो उसके बारे में कोई एक गुण – चिन्ह के माध्यम से जानने का भाव निर्णय में तर्कादी से स्पष्ट हुआ आगे वही धारणा-stock में जमा हो गया | द्रव्य के अनंत गुण एवं अनंत पर्याय में से कुछ जानेगा इस लिए मैंने असंख्यातवा भाग आगे बढ़ने का कहा था |

४- व्यंजनावग्रह अज्ञान है या अरुचि ?

समाधान – दोनों ही नहीं क्योंकि वह तो प्रमाण ज्ञान रूप ही है |

शंका समाधान – ४- व्यंजनावग्रह अज्ञान नामका औदयिक भाव है | प्रमाण ज्ञान कैसे ? यह समझने की बात है मैं समझने की कौशिश करूंगा | विषय की अरुचि होने पर भी व्यंजनावग्रह सम्भव है क्योंकि यह चक्षु एवं मन को छोड़कर ४ इन्द्रियों की प्राप्यकारिता को विषय बनाता है | चक्षु एवं मन के विषय में अवग्रह ही कम ज्यादा होता है |

५- शतावधान आदि अर्थावग्रह में होते हैं ? अवधान धारणा के बल पर नहीं |

समाधान – शतावधान आदि ज्ञान का विशेष परिणमन स्मृति आदि की विशेषता है और स्मृति धारणा के बल पर ही होती है | अर्थावग्रह मात्र से असम्भव हैं |

शंका समाधान – ५- इससे मैं सहमत हूँ | स्थुलतः स्मृति से जोड़ सकते हैं और नय विशेष से ऐसा कहने में बाधा नहीं है | परन्तु ऋजु सूत्र नय के कथन की विवक्षा से जानने का प्रयास करूंगा | प्रत्येक पर्याय एवं उसके अविभागी प्रत्यछेद स्वाधीन ही परिणमते है | कथन पराधीन या पर सापेक्ष हो सकता है | अवधान को जानने के लिए खोज जारी है |

एक ही जीव एवं प्राथमिक अवग्रह के अनुमान को सर्वथा नहीं मानना चाहिए / स्मृति एवं अवधान में अंतर हैं / अवधान में चूक सम्भव नहीं है एवं धारणा के बल पर प्रत्यक्ष चूक होती दिखाई देती है /

६- ईहा प्रीति या रूचि है ?

समाधान – यह क्रमशः चारित्र या श्रद्धा गुण की पर्याय है /

७- ईहा आदि ज्ञान कर्मों का संक्रमण सम्भव है क्या ?

समाधान – ज्ञान से असम्भव है / लेश्या आदि के निमित्त से होती है /

शंका समाधान – ६-७- यह क्रमशः चारित्र या श्रद्धा गुण की पर्याय है / सही है परन्तु ज्ञान में उपचरित उपदेश शैली में कहा जाता है कि है जीव ! तूने आत्मा की प्रीति पूर्वक नहीं सुना- अपने को कभी अभेद ध्रुव भगवान नहीं जाना–माना / ज्ञान के बिना किसी भी शक्ति का कथन असम्भव होने से ज्ञान मात्र में अनंत शक्तियां उछलती है अर्थात एक ज्ञान में अनंत शक्तियों का रूप है इस अभिप्राय से उक्त कथन करने में आया / उसी प्रकार ज्ञान बंध के १० करण आदि में अहेतुक ही है / चारित्र गुण की विशेषता से ही बंध, संक्रमण, निर्जरा आदि होते हैं परन्तु समझाने के लिए उसके साथ होने वाला ज्ञान किसकी ईहा कर रहा था या किस विषय में रूचि थी यह दर्शाने में सरल पड़ता है /

८- स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क आदि अर्थावग्रह में सम्भव हैं क्या ?

समाधान – 'प्रत्यक्षादिनिमित्तं स्मृति...' परीक्षामुख के इस सूत्र के अनुसार स्मृति आदि प्रमाण ज्ञान में अवग्रह आदि रूप प्रत्यक्ष आदि निमित्त होते हैं, तो फिर ये स्मृति आदि अर्थावग्रह में सम्भव कैसे होंगें ?

शंका समाधान – ८- नहीं / स्मृति, प्रत्यभिज्ञान, तर्क आदि अवाय में होते हैं /

अवग्रह से सम्यकदर्शन नहीं सम्यकदर्शन के समय का विशद अवग्रह लो अविशद अवग्रह नहीं / १ इन्द्रिय से १२ वे गुणस्थान तक के मतिज्ञान का अवग्रह लो, अवग्रह से सम्यक्त्व मिथ्यात्व का सम्बन्ध नहीं है, हाँ "सत्य जानने पर भी न माने तो मिथ्यात्व हो जाता है /" - गोम्मटसार जी

९- पुरुषार्थी को अप्रयोजन भूत प्रसंग का व्यंजनावग्रह होता है ? आत्मा का अर्थावग्रह यदि अंतर्मुहूर्त हो जावे तो केवलज्ञान होता है ?

समाधान – सिद्धांतानुसार यह नियम नहीं है /

शंका समाधान – ९- पुरुषार्थी को अप्रयोजन भूत प्रसंग का व्यंजनावग्रह होता है ? आत्मा का अर्थावग्रह यदि अंतर्मुहूर्त हो जावे तो केवलज्ञान होता है क्या ? आपने ऐसे नियम से इनकार किया है / जबकि प्रत्यक्ष देखा जाता है कि ४ इन्द्रिय के विषय में रूचि न होने से उसका व्यंजनावग्रह होता है / स्वतः भी होता है /

इस सबको १२ वे गुण. तक समझने की कौशिश करें | एक समय में एक ही विषय को जानता है | आत्मा में उपयोग एकाग्र करने वाले को व्यंजनावग्रह क्यों नहीं होगा ? समझाएंगें तो मुझे आनंद होगा | आगे के हिस्से असहमति तो समझी जा सकती है क्योंकि आप मतिज्ञान में स्वानुभव स्वीकार नहीं कर रहे हो तो केवलज्ञान मानने का प्रसंग तो स्वतः ही अपास्त हो जाएगा |

१०- धारणा के बाद पुनः तत्सम्बन्धी विषय का ही अर्थावग्रह ही होता है, जो स्मृति आदि कहे जाते हैं , वे अर्थावग्रह में ही गर्भित हैं ?

समाधान – १- ऐसा है तो स्मृति आदि ज्ञान प्रमाण ज्ञान अकार्यकारी सिद्ध हो जायेंगें | २- अवग्रह ईहा अवाय धारणा के अतिरिक्त भी मतिज्ञान स्मृति प्रत्यभिज्ञान तर्क अनुमान के रूप में पाया जाता ही है | ३- व्यंजनावग्रह के बाद अर्थावग्रह हो ऐसा क्रम ही नहीं है |

शंका समाधान –१० – १- स्मृति आदि अवाय में कार्यकारी है यह बात स्वीकृत है | २- बिलकुल स्वीकृत है ३- प्रथम समय में जिसका व्यन्जनावग्रह होता है उसका कालान्तर में अर्थावग्रह होता है इससे कैसे इनकार किया जा सकता है | विशद ज्ञान एवं बिशुद्धि होने पर उस ही अथवा अगले १२ वे गुण. तक स्वीकारा जाना चाहिए |

अनुभव धारणा में मानने से प्रागभाव का क्या होगा ? धारणा के स्थान पर वर्तमान ज्ञान की पर्याय धारणा की और न देखकर ज्ञायक का अनुभव करना होता है | निमित्त पर बजन, व्यवहाराभास होगा |

स्मृति निर्णय में सहायक है, अनुभव में नहीं | सावधान - प्रवचन सुनते-पढ़ते समय सीधा वाच्य देखो न कि स्मृति |(उपचार से सहायक भी कह सकते हैं |)

मेरे अन्य प्रश्न -

१- अन्यत्र गति से आया जीव क्या भोंदू होता है ? जैसे मेंढ़क मर कर स्वर्ग गया तो वहां कौनसा स्मृति आदि लेकर गया | अवधि ज्ञान प्रयोग न करने पर क्या वह वेवकूफ होता है ?

२- अचानक खोज का भाव जन्मना, दूध पीना, लड़ना, शांत रहना क्या है ?

३- प्रवचन करते समय भाषण देते समय, दूसरों को या स्वयं बहुत तयारी करने पर भी समय पर वह याद नहीं आता और बिना तैयारी या तैयारी से भिन्न बढिया भाषण आ जाता है | ऐसा क्यों ?

४- पाठ बोलने पर रटा जाता है तो बिना उपयोग लगाये भी शुद्ध सही बोल लेते हैं और भान भी नहीं रहता कोई टोक दे तो याद भी नहीं आता कि गलत बोला ठा या सही साथ ही क्या बोल रहे थे यह भी याद नहीं रहता है | स्मृति देकर बोलने में असमर्थ हो जाते हैं | अनेकों बार यदि जल्दी बोलने या राग बिना बोलने की आदत हो तो धीरे -२ या राग से गाने पर लाइन शब्द भूल जाते हैं गाने में असमर्थ हो जाते हैं |

५- किसी विषय में विशेषता हो जाने पर भी अन्य विषय में बुद्धि असमर्थ हो जाति है |

६- निज सत्तावग्राही ज्ञान नियमसार या किसी ग्रंथ में आता है | वह किस अर्थ में आता है |

७- आप निर्णय पर नहीं पहुंचे लगता है क्योंकि शंका समाधान क्र, १ में आप अनुभूति वाले ज्ञान में मति श्रुत के भेद को ही स्वीकार नहीं करते तो क्या वहां ज्ञान दोनों में से कोई सा भी नहीं होता ? और क्या मतिज्ञान को कभी भी अतीन्द्रिय संज्ञा नहीं मिल सकती है | आप मतिज्ञान में अनुभूति नहीं मानते हैं परन्तु प्रमाण तो स्पष्ट मिलते हैं |

८- क्या एक निर्णीत विषय पर आगे मतिज्ञान की आवश्यकता नहीं पड़ती है सीधे दर्शनोपयोग से श्रुत ज्ञान या धारणा हो जायेगी ?

९- क्या एक ही विषय के विशेषो को जानते समय लगातार एक ही ज्ञान मति या श्रुत रह सकता है यदि हां तो वही ध्यान कहा जा सकता है | ईहा बिना आत्मा का पूर्व से स्पष्ट ईहा, अवाय, धारणा को प्राप्त आत्मा अवग्रह को प्राप्त क्यों नहीं हो सकता ? इसे शास्त्रों में निज सत्तावग्राही ज्ञान कहा जाता है | इसे भी ध्यान माने तो क्या आपत्ति है ?

१०- ज्ञान में जिद काम नहीं आती वह तो हमारे चिंतन से निरपेक्ष परिणम ही रहा है हाँ आचार्यों ने जो समझाने की चेष्ठा की है उसे हम भी समझने का प्रयत्न कर रहें हैं | समझने में फ़ैल होना अपराध नहीं है परन्तु समझने का उपाय न करना तो अपराध ही होगा | यह सब ज्ञान स्वभाव की महिमा आने के लिए ही है |

११- बीज बुद्धि वाला अवग्रह कमजोर कैसे हो सकता है ?

१२- अनेकों मनुष्यों, सारे तिर्यन्चों, नारकियों, एवं देवों को सम्यक दर्शन में कौनसी धारणा काम आती है स्मृति कैसे सम्यक दर्शन में काम आती है ? शिव्भूती एवं अंजन चोर को क्या विद्वानों जैसी धारणा से स्मृति होती होगी ? ११ अंग ९ पूर्व के ज्ञाता को संकित क्यों नहीं हुआ ? तत्समय की योग्यता ही स्वीकार करना होगा |

१३- स्मृति सामान्य की या विशेष की ? हम तो विद्वता के नाम पर पढ़ते सुनते हैं क्या स्मृति उस विशेष की होती है ? यह तो बहुत कमजोर दिखाई देती है | प्रमाण नय निक्षेप से भरी हुई होती है जबकि स्वानुभव के समय तो मात्र सामान्य ही विषय बनता है | भूतकाल में जो कुछ सामान्य का निर्णय हुआ स्मृति में आई क्या तब ही वर्तमान पर्याय में अनुभव होगा ? सीधे जानने की क्षमता को स्मृति क्यों कहना चाहते हैं क्या वह विशद अवग्रह नहीं हो सकता है ? कहीं ऐसा तो नहीं कि हमने कमजोर मानने के अभिप्राय से ही अर्थ निकालना जारी रखा हो ? तत्समय की योग्यता से स्वतन्त्रता पूर्वक जानना वस्तु स्वरूप को कहीं बाधित तो नहीं कर रहा है |

१४- ज्ञान को ज्ञेय की पराधीनता नहीं होती है | तत्समय की योग्यता से स्वतः जान लेता है | तुलसी, बाल्मीकि, सुपर ३०, सूरदास , हवाई जहाज की खोज / आविष्कार राईट ब्रदर्स के ज्ञान की आकस्मिक खोज है | हां यह बात सही है कि यह भी उनकी स्वतः स्फूर्त योग्यता से ईहा अवाय धारणा का विषय बनी है परन्तु नई-२ सोच स्वतः विकसित होती है |

१५- तीर्थंकर को द्वादशांग का ज्ञान होता है तो वैराग्य क्यों नहीं आता है | और वृक्ष गिरते देखने पर या तारा टूटते देखने पर ओस बूंद गलते देखने पर क्यों और अचानक कैसे हो गया ? तत्समय की योग्यता किसकी थी ? ज्ञान चारित्र की सम्भव है या नहीं ?

१६- अवग्रह से ईहा दो कारणों से नहीं होती एक तो लापरवाही से दूसरे निर्णय स्पष्ट होने से | तो आत्मा सुनते विचारते या लक्ष्य देने मात्र से ज्ञायक का अनुभव क्यों नहीं सम्भव है ? और वह विषद अवग्रह क्यों नहीं हो सकता है ?

Consciousness = Knowledge अवचेतन मन
UnConsciousness = Comma बेहोश, अंजान, अचेतन मन
Sub Consciousness = subject to know अवचेतन मन
Super Consciousness = kevalgyan, full Knowledge,